शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 दिसम्बर 2013

लोक साहित्य में रोजगार की संभावनाएं

निलेश राउत, शोधार्थी
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर(म0प्र0), भारत

शोध संक्षेप

भारतीय समाज की जीवन शैली न्यूनाधिक एक जैसी है, किन्तु उसमें आंचलिकता और लोकतत्व की झलक उसे विशिष्टता प्रदान करती है। लोक जीवन के अध्ययन में सबसे बड़ी कठिनाई उसमें बढ़ती जा रही विशिष्ट संस्कृति एवं अपसंस्कृति के पार्थक्य को समझने की है। उसका मूल स्वरूप धुंधलके में खोता जा रहा है। सामान्य जनता के मन में यह बात बैठा दी गई है कि पुराने रीति-रिवाज, लोक-गीत का गायन गंवारपन है। नये फिल्मी गीत गाना या पश्चिमी संस्कृति को अपनाना, अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग प्रगतिशीलता, आधुनिकता है। वर्तमान समय में आवश्यकता इस आवरण को हटाने की है, जिसके लिए सबसे उपयुक्त माध्यम लोक साहित्य है। लोक साहित्य को आधुनिकता के आवरण ने ढंक लिया है। लोक की विविधता के कारण लोक साहित्य भी विविधता के रंगों से रंजित है। लोक साहित्य के अंग - लोक कथा, लोक गीत, लोक चित्रकला, लोक मूर्तिकला, लोक संगीत, लोक नृत्यकला आदि हैं। लोक क्षेत्रों में लोगों को लोक भाषाओं के माध्यम से षिक्षित कर तथा लोक साहित्य का प्रचार-प्रसार किया जाए तो लोक साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों जैसे - षिक्षा, साहित्य एवं कला तथा मनोरंजन आदि में रोजगार की अपार संभावनाएँ बढ़ जाएंगी।

भूमिका

लोक साहित्य में एक युग के लोक की तस्वीर रहती है। किसी भी युग का लोक साहित्य उस युग के सामाजिक इतिहास का मौखिक दस्तावेज है। भारतीय समाज की जीवन शैली एक जैसी है। उसमें आंचलिकता एवं लोकतत्व उसे विशिट बनाते हैं। लोक जीवन के सांस्कृतिक पक्ष में लोग संगीत- लोकगीत, लोकनृत्य, लोकनाट्य-लोककथाएं, लोकगाथाएं, पहेली, लोकोक्तियाँ, रीतिरिवाज, पर्व-उत्सव, व्रतपूजन, अनुष्ठान, लोक देवता, मेले आदि का समावेश है। कला के अंतर्गत मूर्ति, काष्ठशिल्प, वेशभूषा, आभूषण, गुदना आदि हैं। सभ्यता के अंतर्गत दैनिक चर्या, लोकाचार, भोजन व्यंजन, लोकरंजन तथा उद्योग व्यापार की चर्या शामिल है। बुन्देलखंड के लोक जीवन में शाश्वत जीवन मूल्यों का संस्करण भारत की चिरंतन संस्कृति का पोषण एवं रागात्मक बोध है।

लोक साहित्य एक ऐसा कीमती रत्न है, जो छोटे-बडे, गोरे-काले, अमीर-गरीब सभी के पास रहता है। और सभी के उपयोग का है। उसका स्वामी न तो कोई एक वर्ग है, न एक जाति और न एक सम्प्रदाय। उसे पूंजीपति की तिजोरी में कैद नहीं किया जा सकता है। वह तो लोकधन है, जो लोक के लिए लोकमुख में रहता है। लोक याने शिक्षित-अशिक्षित, धनी-निर्धन, मजदूर-मालिक, कृषक-व्यापारी, ग्रामीण-नागरिक सभी लोक हैं। केवल गांवों के गंवारों को लोक कहना उचित नही है। लोक साहित्य सभी का है। पिता धन पिता से पुत्र या पुत्री को मिलता है। और पुत्र जब पिता बनता है, तब वह उसमें कुछ और जोड़ या

घटाकर अपनी संतान को देता है। इसी तरह लोक साहित्य का लोकधन एक युग के लोक से दूसरे युग के लोक को मिलता है, और लोक अपनी आवश्यकता के अनुसार उसे ग्रहण करता है। हर युग में नये सृजन को लोक द्वारा लोक की कसौटी पर कसकर अपनाया जाता है और वही लोक साहित्य में शामिल हो पाता है। आज जरूरत है ऐसे ही लोक साहित्य की, जो आदमी में आत्मीयता, सहानुभूति, प्यार, उत्साह और रस पैदा कर सके तथा जो आर्थिक भेद-भाव, मशीनी जकड़न और तमाम देशों के खिलाफ जूझ सके तथा लोक साहित्य के द्वारा आम आदमी रोजगार की संभावनाएँ तलाश कर सके। वर्तमान में लुप्त होते लोक साहित्य को फिर नवगति प्रदान कर सके।

वर्तमान समाज में लोक साहित्य की आवश्यकता :-

बदलाव से गुजरना हर समाज की नियति है। समाज की गतिशीलता की पहचान है। आदि काल से वर्तमान काल तक समाज ने जो उन्नति की है, वह परिवर्तन का परिणाम है। परन्तु बदलाव की प्रकृति और समाज की प्रकृति से मेल जानना जितना जरूरी है, उतना ही उसके परिणामों पर विचार करना। कही ऐसा न हो कि कोई घातक बदलाव हमारी समाज की मूल प्रकृति को ही बदल दें और दुनिया के सामने हमारी पहचान ही लुप्त हो जाए।

आजादी के बाद देश का विकास जरूरी था। देश ने सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्रों में विकास भी किया। संचार के साधनों का विकास हुआ। तकनीक का विकास हुआ। इन सभी विकासों से आधुनिकता की प्रवृत्ति का जन्म हुआ और आधुनिकता के नाम पर पश्चिमी संस्कृति का अंधानुकरण किया जाने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि लोक साहित्य पर आधुनिकता की चादर पड़ गयी। लोक संस्कृति कहीं खो-सी गयी। लोक साहित्य के अंतर्गत लोककथा, लोकगीत, लोक चित्रकला, लोक मूर्तिकला, लोकनाट्य आदि प्रायः लुप्त होते जा रहे हैं। ग्रामीण उद्योग एवं कला कौशल भी डूबने की कगार पर है। त्यौहारों, पर्वो और उत्सवों पर लोक गायकों की जगह फूहड़ एवं बेमेल गीतों ने ले ली है। देश की पहचान और राष्ट्रीय अस्मिता की प्रतीक लोक संस्कृति के लिए लोक साहित्य का फैलाव आवश्यक है। लोक दृश्य चेतना का सागर है, और लोक ह्रदय को जागने के लिए लोक साहित्य का प्रचार-प्रसार किया जाए। लोगों को लोकभाषाओं के द्वारा जागरूक किया जाए वर्तमान तथा भविष्य में रोजगार की संभावनाएं खोजी जाएं। लोक संस्कृति ही भारतीय संस्कृति की जड़ है। जरूरत है लोक संस्कृति को अपनाने की ताकि दुनिया के सभी देशों में उसकी आभा दमकती रहे।

लोक साहित्य में रोजगार

लोक साहित्य राष्ट्र के हर जनपद की लोक भाषा में लोक प्रचलित लोक का साहित्य है। बुंदेलखंड के लोक का लोक साहित्य बुंदेली है और ब्रज का ब्रजी में। लोक साहित्य में आंचलिक कट्टरता की भावना को प्रश्रय नही मिलता। कई ऐसे लोकगीत, लोक गाथाएं एवं लोक कथाएं है जो एक अंचल से दूसरे अंचल में जाकर लोक प्रचलित हो गईं। बुंदेली लोकगाथा- 'आल्हा' पूरे

उत्तर भारत में गायी जाकर हर जनपद की अपनी बन गई है।

लोक साहित्य का स्वरूप अत्यन्त व्यापक एवं समृद्व है। आधुनिक युग में इसका प्रकाश धीमा भले ही हुआ है, परन्तु आज भी उसकी लालिमा कम नही हुई है। लोक साहित्य के द्वारा कई क्षेत्रों में रोजगार की व्यापक संभावनाएं व्याप्त है। ये क्षेत्र इस प्रकार हैं -

1 शिक्षा

2 साहित्य एवं कला

3 मनोरंजन

शिक्षा

लोक साहित्य का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। किसी भी लोक क्षेत्र में वहां की जनता लोक भाषा को जितनी अच्छी तरह से जान तथा समझ सकती है। उतना किसी अन्य भाषा को नही। इसलिए यदि लोक क्षेत्रों में शिक्षा का माध्यम यदि लोकभाषा रखा जाता है तो उसे वह अच्छी तरह समझ सकेंगे। यदि लोकभाषा को लोक क्षेत्रों में शिक्षा का माध्यम बनाया जाता है तो लोकभाषा का प्रचलन बढ़ने लगेगा। लोकनाटक, लोकगीत, लोककला को शिक्षा के माध्यम से संरक्षित किया जा सकता है।

उदाहरण के लिए बुंदेली लोकभाषा बुंदेलखंड में बोली जाती है, किन्तु यह सम्पूर्ण बुंदेलखंड में प्रचलित नही है। ग्वालियर राज्य के पश्चिमी भाग में ब्रज और राजस्थान की कुछ बोलियों से मिश्रित बुंदेली बोली जाती है। नर्मदा के पार होशंगाबाद, नरसिंहपुर, सिवनी में बोली जाती है तथा बालाघाट के लोधियों द्वारा भी बोली जाती है। इस प्रकार यह 19 हजार वर्गमील में बसे लोगों द्वारा बोली जाने वाली लोकभाषा है। यदि इन क्षेत्रों में लोगों को लोकभाषाओं में शिक्षा दी जाए तो वह बिना कठिनाई के इसे ग्रहण कर सकते हैं और जब लोकक्षेत्र के लोक शिक्षित होंगे तो वह अपनी लोककला, लोकभाषा, लोकगीत, लोक संस्कृति को जान समझ सकेंगे तथा अपनी इस पूंजी को सहेज तथा संवार सकेंगे। जब वह जागरूक होंगे तो रोजगार के नये अवसर उन्हें प्राप्त होने लगेंगे।

साहित्य एवं कला

साहित्य एवं कला किसी भी समाज का दर्पण होता है। भावों तथा विचारों को अभिव्यक्त करने की मानवीय लालसा ने विभिन्न माध्यमों को जन्म दिया। लेखन, संगीत तथा विभिन्न प्रकार की कलाएं इन्ही माध्यमों में से थी। अपने मनोभाव, विचारों तथा समस्याओं को अभिव्यक्त करने के लिए तथा इन समस्याओं के समाधान के लिए साहित्य एवं कला एक सशक्त माध्यम के रूप में विकसित हुई। प्राचीन काल से वर्तमान काल तक की यात्रा में भारतवर्ष में ऐसे असंख्य साहित्यकार हुए हैं, जिन्होंने अनेक विषयों को आधार बनाकर साहित्य रचना में अमूल्य योगदान दिया है।

लोक साहित्य और लोक कलाओं के असली कोष गांवों में है। और गांव वालों से बात करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि वे गायन, वादन, नर्तन, आलेखन आदि में भेद नही करते। लोक साहित्य के अंग - लोक कथा और लोकगीत लोक चित्रकला, लोक मूर्तिकला, लोकसंगीत, लोक

नृत्यकला आदि से एक काज अर्थात् लोकोत्सव, व्रत-त्योहार, लोकखेल, लोक संस्कार आदि बनता है। जिससे यह कह सकते है कि लोक साहित्य और लोक कलाएं एक दूसरे के पूरक हैं।

साहित्य एवं कला के द्वारा भी पर्याप्त रोजगार की संभावनाएं दिखायी पड़ती हैं। यदि लोक कलाओं एवं साहित्य को बढ़ावा देने के लिए शासन एवं समाज के द्वारा कलाकेन्द्र, लोकसंगीत, एवं नृत्य विद्यालय खोले जाते हैं तो इससे लोक क्षेत्रों की जनता अपने लोक साहित्य एवं लोककला की गहराई को समझ सकेगी। साथ ही साथ उन्हें रोजगार प्राप्त करने के लिए कहीं और भटकने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। शासन के द्वारा लोक क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के व्यापार मेलों, प्रदर्शनियों, नाट्य मंचों का आयोजन किया जाना चाहिए। जिसके द्वारा लोक साहित्य एवं लोककला को बढ़ावा मिलेगा और लोगों को नित्य नए रोजगार उपलब्ध हो सकेंगे। इसके अतिरिक्त देश के विकास के मार्ग में जो सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक समस्याएं हैं, उन्हें भी काफी हद तक दूर किया जा सकता है।

मनोरंजन

लोक साहित्य लोक संस्कृति का चित्रण करता है। उसके लोकगीतों, लोकगाथाओं, लोकनाट्यों, लोकोक्तियों आदि में हर लोक क्षेत्र के भोजन पेय और वस्त्र भरण से लेकर लोकदर्शन या लोकचिंतन तक के क्रियाकलापों और विचारों का अंकन हुआ है। साहित्य एवं कला का उद्भव ही आनंद प्राप्ति के लिए हुआ है। जनमानस अपना उल्लास और कसक इन्हीं के द्वारा व्यक्त करता है। एक साहित्यकार या कलाकार अपनी रचनाओं में अपने क्षेत्र की संस्कृति, रीति-रिवाज, परंपराओं एवं समस्याओं का चित्रण करता है।

लोक साहित्य में मनोरंजन के क्षेत्र में भी रोजगार अर्जित करने के अनेक अवसर उपलब्ध है। वर्तमान समय में संचार के साधनों का तीव्रतम गति से विकास हुआ है। जिसका परिणाम सिनेमा, रेडिया, दूरदर्षन इंटरनेट आदि है।

लोक क्षेत्रों में अनेक लोकभाषी फिल्मों का निर्माण हो रहा है। और कुछ फिल्मों में तो बहुत अधिक सफलता अर्जित की है। जिसमें 'मोर झैया भुइया'', मंया लेले मंया देदे, और झन-भूलों मां बाप ला' आदि। इसी तरह राष्ट्रीय एवं कई क्षेत्रीय टी.वी. चैनलों जैसे डी.डी.1, डी.डी. 2, ईटीवी मध्यप्रदेश तथा जी छत्तीससगढ़ चैनलों में लोक सांस्कृतिक कार्यक्रमों को प्रसारित किया जा रहा है। लोक क्षेत्र में जन्म, मृत्यु, विवाह या कृषि कार्य आदि सभी से संबंधित लोकगीत होते हैं। इन लोकगीतों के बिना कोई भी कार्य प्रारंभ नही होता। ये लोकगीत लोक साहित्य का प्रमुख अंग हैं। आज अनेक लोकगीत गायक एवं गायिका हैं। जिन्होंने लोक गायन के क्षेत्र में काफी सफलता अर्जित की है, जिसमें प्रमुख लोक गायक एवं गायिका तीजन बाई, रितु वर्मा, इला अरूण, मालिनि सिंह, सुनील नाग, जीवन सोनी, सीमा कौशिक, पुनित कृष्ण, ताम्रकर, ममता चन्द्राकार आदि है।

इस आधार पर हम कह सकते हैं कि लोक साहित्य के द्वारा मनोरंजन के क्षेत्र में रोजगार एवं आय अर्जित करने के अनेक अवसर हैं। चाहे वह फिल्मी क्षेत्र, गायन हो संगीत हो या रंगमंच

हो। लोक साहित्य इतना अधिक समृद्व एवं विशाल है कि उसके प्रत्येक क्षेत्र में रोजगार की व्यापक संभावनाएं हैं। वर्तमान में जरूरत इस बात की है कि हम पष्चिमीकरण के पीछे भागने की वजह अपने लोक साहित्य का प्रचार प्रसार करें।

लोक साहित्य का भविष्य:-

हमारे देश में अपने जनपद का लोक साहित्य रहा है। भोजपुरी, मगही, मैथली, बुंदेली, अवधि, मालवी, निमाडी, छत्तीसगढ़ी, राजस्थानी, गुजराती, हरियाणवी, पंजाबी, काश्मीरी, मलयाली, कन्नड, बंगाला, ओड़िया, संथाली, मुंडारी आदि अनेक प्रकार के लोक साहित्य प्रचलित है। लोक साहित्य की प्रत्येक विधा में जीवन पूर्णतः प्रतिबिंबित होता है। मनुष्य भौतिक सम्पदाओं से सभ्य हो सकता हैं परन्तु लोक साहित्य से ही सुसंस्कृत हो सकता है। लोक साहित्य एवं लोक कंठ में पग-पग पर सांस्कृतिक जीवन की अभिव्यक्ति हुई है, मानव जीवन मनन, चिन्तन, हास-परिहास का विराट स्वरूप समाहित है। परन्तु वर्तमान समय में लोक साहित्य आधुनिकता की ओट में छिप गया है, पर वहां विलुप्त नही हुआ है। भारतीय लोक संस्कृति को प्रकाष में लाने का माध्यम है लोक साहित्य, वह लोक साहित्य जो संघर्षधर्मी ऊर्जा से परिपूर्ण है। लोक साहित्य को पुनः अपने स्थान पर विराजमान करने के लिए लोक साहित्य एवं लोक कला को सहेजने एवं संवारने की आवश्यकता है, जिससे लोक साहित्य के विभिन्न अंग - लोक नृत्य, लोकगीत, लोकगाथाएं, लोककथाएं, लोकसंगीत, लोकमूर्तिकला एवं लोक चित्रकला आदि में रोजगार के असंख्य अवसर हो सकें। आज अनेक गायक एवं गायिका लोक गायन में ख्याति प्राप्त कर रहे हैं। मूर्तिकला एवं चित्रकला के अनेक अवसर हैं। जिसमें सामान्य जन रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। लोक क्षेत्रों की कई फिल्मों ने देश तथा विदेशों में भी धूम मचाई है। लोक साहित्य में रोजगार की संभावनाएं वर्तमान के साथ-साथ भविष्य में भी हैं।

निष्कर्ष

हमारे देश में अपने जनपद का लोक साहित्य रहा है। भोजपुरी, मगही, मैथली, बुंदेली, अवधि, मालवी, निमाडी, छत्तीसगढ़ी, राजस्थानी, गुजराती, हरियाणवी, पंजाबी, काश्मीरी, मलयाली, कन्नड, बंगाला, ओड़िया, संथाली, मुंडारी आदि अनेक प्रकार के लोक साहित्य प्रचलित है। लोक साहित्य की प्रत्येक विधा में जीवन पूर्णतः प्रतिबिंबित होता है। मनुष्य भौतिक सम्पदाओं से सभ्य हो सकता हैं परन्तु लोक साहित्य से ही सुसंस्कृत हो सकता है।लोक संस्कृति ही भारतीय संस्कृति की जड़ है। उसी के द्वारा भारतीय संस्कृति का पौधा पल्लवित और पुष्पित हैं लोक के धनगढ़ मानस से निर्मित यह शब्द - शिल्प-सौंदर्य अपनी पूर्णता में अभिव्यंजित होते हुए लोक की आत्मीय परंपराओं एवं सांस्कृति संदर्भो से पुष्ट होता है। हमारे लोक जीवन एवं लोक संस्कृति की संपूर्ण धरोहर का संरक्षण लोक साहित्य में ही होता है। परन्तु आज आधुनिकता एवं सभ्यता के विकास ने इसके अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। यदि लोक क्षेत्रों में लोगों को शिक्षित किया जाए तथा लोक गीत, लोकनाट्य, लोक मूर्तिकला, लोक चित्रकला आदि विधाओं को पुनः जीवित करने के लिए षासन के द्वारा मदद की जाए तथा इन क्षेत्रों में लोकगायकों, चित्रकारो, कलाकारों को

प्रोत्साहित किया जाए तो सामान्य जन की रूचि इस ओर बढ़ने लगेगी। वर्तमान समय में लोक साहित्य में रोजगार की न्यूनतम स्थिति है। उसे अधिक से अधिक सुधारा जा सकता है। जरूरत है, लोकसंस्कृति को और अधिक अपनाने की ताकि राष्ट्रीय स्मिता बनी रहे और दुनिया के सभी देशों में उसकी आभा दमकती रहे। ऐसी लोक संस्कृति को प्रकाश में लाने का माध्यम है लोक साहित्य वह लोक साहित्य जो संघर्षधर्मी ऊर्जा से परिपूर्ण है।

सन्दर्भ

1 डॉ. शिवकुमार तिवारी, मध्यप्रदेश की जनजातियां समाज एवं व्यवस्था, 2009

2 प्रो. नर्मदा प्रसाद गुप्त, बुंदेली का लोक साहित्य परंपरा और इतिहास, 2001

3 गोरेलाल तिवारी, बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास, 1990

4 डॉ. अशोक शर्मा, बुंदेली भाषा और साहित्य, 2006

पत्रिका

1 रचना जनवरी, फरवरी - 2011

2 कुरूक्षेत्र नवम्बर - 2010

वेबसाईट:-

1 www.wikipedia.org

2 www.timesof india.com

3 www.rediff.com